आखर हिंदी पत्रिका; e-ISSN-2583-0597 खंड 3/अंक 1/जनवरी 2023
Received:11/01/2023; Published:31/01/2023

कहानी

आलोकिता

डॉ. प्रताप केशरी होता

मूल: सातकड़ी होता (ओड़िआ)

मितु दीदी को मैं लगभग भूल चुका था। करीब सात साल से न ही बातचीत हुई थी न ही मुलाकात। हमारे गाँव के पास ही नरिपुर में मेरी ननिहाल है। उसी गाँव में मितु दी' का घर। छुटपन में ननिहाल जाता, मितु दी' के साथ खेलता, घुमता। वह थी पहली और सबसे करीब दोस्त। मुझसे चार-छः महीने बड़ी होने से मैं उन्हें दी' बुलाता था। हमउम्र होने के कारण हम दोनों करीब थे ऐसा नहीं, दोनों की एक जैसी सोच ने ही हमें करीब लाया था। ननिहाल पहुँचते ही मितु दी' मिलने आ जाती थीं। मेरा कान पकड़े व पेट में चिकोटी काटते हुए कहती थीं, "मैंने क्या अपराध किया है जो तुम्हारे आने की खबर तक नहीं दी।" शर्म से मैं सिर झूका लेता था। मेरी अवस्था की उपलब्धि करती हुई कहती, "लड़के से बात करते हुए लड़की को लजाना चाहिए पर यहाँ तो स्थिति उलटी ही है। मेरा हाथ तुम्हारे शरीर पर सटा ही नहीं देखो तुम्हारे कानों का रंग कैसे बदल गया है ?" वास्तविक उनसे मिलने से सिर्फ लजाता न था, बल्कि संकोच भी करता था इसलिए कि कोई कुछ कह न दे। जो भी हो मितु दी' एक लड़की और मैं लड़का। रिश्ता सिर्फ ननिहाल के पड़ोसी के रूप में। फिर भी मितु दी' और मेरे बीच ऐसा एक रिश्ता बन गया था, जो सर्दी की धूप जैसा उष्ण और आकर्षक था।

पढ़ाई खत्म करके नौकरी के लिए गाँव से चला गया। सात साल गुजर चुके इस बीच | गाँव तो जाता था पर मामा के घर के न जा सका समय की कमी के कारण। मेरी शादी हो गई है और लड़का-लड़की के पिता भी बन चुका हूँ। मितु दी' ने भी शादी करके घर बसा लिया होगा, ऐसा अनुमान था। मन ही मन अपने आपको मैं एक गुनाहगार मान रहा था, क्योंकि शादी में मैं उन्हें खास मेहमान के रूप में न बुला पाया न ही शादी के बाद अपनी पत्नी से उनका परिचय कर सका। ऐसा करना मेरा उद्देश्य नहीं था, पर ये हुआ, जबकि एक दिन मैंने उनकी कसम खाकर यह बात कही थी कि शादी से पहले भावी पत्नी की तसवीर दिखाकर उनके सुझाव के आधार पर शादी करूँगा और शादी में कोई आए न आए वह जरूर आएँगी। शादी की खबर उन्हें क्यों न दे पाया व कार्ड देने उनके पास क्यों न जा सका-इसका निश्चित कारण याद न होने पर भी उन्हें शादी के विषय में न कहने या न बुलाने से मैं अपने वायदे से मुकर गया था, यह बात कभी-कभी मुझे अनमना-सा कर देती थी। शायद इसलिए उनके विषय में एक अस्वाभाविक खबर सुनकर मुझे ठेस पहुँची

और उनकी आज की दुर्दशा के लिए और कोई जिम्मेदार हो न हो कुछ हद तक मैं ही जिम्मेदार हूँ- ऐसा मैंने महसूस किया। मेरे प्रति उनका प्यार मेरे अनुभव से कहीं ज्यादा था - यह बात मुझे बराबर सालती रहती।

मितु दी' एक खास गुण उनके हृदय का निष्कपट स्नेह था तथा जिसे वह चाहती थी उसके सामने दिल खोलकर रख देती और जिससे उनका दिल न लगता था, उससे दूर ही रहती। जरूरत पड़ने जहाँ किसी का प्रबल समर्थन करती थी तो किसीका प्रबल विरोध करने से पीछे न हटती थी। वह स्पष्टवादी थी। शायद इसलिए कइयों की प्रिय थी तो कुछ उन्हें देख जलते भी थे। ऐसा स्वभाव छोड़ने के लिए एक बार मैंने अगाह भी किया था। उन्होंने करारा जवाब साधा, "जिसे अच्छा नहीं लगता जबरन उसे अच्छा कहने के लिए सीखा रहे हो ?" मैंने कहा, "नहीं, ऐसी बात नहीं, फिर भी कड़वा सच न कहकर चुप रहने से न होता!" उस दिन अपने करीब खींचते हुए उन्होंने कहा था, "आज इसका अर्थ तुम्हें समझ में नहीं आ रहा, पर एक न एक दिन तुम समझोगे। शायद तब मैं तुम्हारे पास रहूँ या नहीं, किसे पता ?"

मेरे इतने करीब होते हुए भी कभी-कभी बहुत दूरी महसूस करती थी- यह मैं समझ कर रहा था। गाँव में एक बार थिएटर हो रहा था। ननिहाल के कुछ बच्चों के साथ वह आई थी थिएटर देखने के लिए। मैं ग्रीनरूम के पीछे एक सिगरेट सुलगा ही रहा था कि दबी पाँव आकर पीछे से मेरी आँखें बंद करते हुए उन्होंने कहा था, "नाटक की नायिका असली नहीं है फिर भी क्यों शर्मा रहे थे?" धीमी रोशनी न थी वहीं, मैं घबरा गया या न पता नहीं, उन्होंने अचानक फिर कहा, "मैं एक दर्शक हूँ और मैंने जो कुछ भी कहा, वह एक दर्शक का अनुभव ही है। उसके बाद मेरे कुछ कहने से पहले ही आत्मीयता हल्की सी खुशबू छोड़ वह चली गई थी।

मैं कविता लिखता हूँ, इसलिए एक दिन उन्होंने जिद की उन्हीं पर एक कविता लिखने के लिए। मैंने लिखा भी। परंतु जिस दिन कविता सुनाने के लिए उनके पास बैठा, मेरे हाथ से कॉपी छीनकर एक संदुक में बंद करते हुए कहा, "ना, रहने दो ! तुमने मुझ पर कविता लिखी है, वही काफी है, और कुछ नहीं।" मैंने आश्चर्य होकर कहा, "आप नहीं सुनेंगी?" छुईमुईं की तरह लजाते हुए उन्होंने कहा, "समय थोड़े ही चला नहीं जा रहा है। तुम इतने बेचैन क्यों हो ? दूसरे किसीको मन दे तो नहीं बैठे ?"

वह कविता कॉपी उन्हीं के पास ही रह गई। न कॉपी वापस ला पाया, न ही उन्हें याद दिलाया। सात साल बाद आज मितु दी के साथ उस कॉपी भी याद आई। मैं अनमना सा हो गया। अगर वह कॉपी पास होती तो उस कविता को पढ़ पाता या नहीं, कहना मुश्किल है। पर उस तरह की कविता मैंने मितु दी' के विषय में कैसे लिखी, सोचने से संकोच हो रहा है। अच्छा हुआ, मैंने उसे नहीं पढ़ा, न उन्होंने सुना। अगर पढ़ा होता क्या जो सोचती- छी... छी...। लेकिन आज भले ही संकोच हो रहा हो पर उसी दिन यौवन का पहला इंद्रधनुषी रंग उन्हीं के शरीर पर लगाया था - इस बात को आज मैं अस्वीकार नहीं कर सकता। मितु दी' ने उस कॉपी को लौटा देने की बात कही थी। मैंने कहा- "है, तो रहने दो। तुम्हारे विषय में ही तो लिखा था।" देखा कि मेरी बातों पर ध्यान न देकर नए-नए खिले हुए आम के बौर को वेदनासिक्त दृष्टि से देख रही थी वह। उनका वह चेहेरा भी कितना सुंदर न लग रहा था !

सालों बाद वह अचानक आँखों के सामने आ गई । इतने दिन तक उनकी खोज खबर न थी । मैंने भी किसीसे नहीं पूछा था। हमारे घर आई मेरी ममेरी बहन खुद ब खुद किसीको बोल रही थी कि मितु दी' अपने पति से तलाक लेकर दूसरे किसीके साथ रह रही है। पहले-पहल मैंने इस बात पर विश्वास नहीं किया । दीदी मेरी पत्नी को सुनाते हुए बोल रही थी, "इस बात पर शुभ का विश्वास नहीं हो रहा है । मितु दी' इसे छिपाकर अमरूद दिया करती थी, इसलिए शुभ आज मितु दी' का साथ नहीं देगा तो क्या मेरा साथ देगा ? " मेरी पत्नी ने मुझे संदेह की दृष्टि से देखते हुए कहा, "मैं मितु दी' दे मिली नहीं, लेकिन उनके बारे में सुना बहुत है । जिससे अपनी चीज न संभली जाती पर दूसरों पर नजर टीकी रहती, उसका ऐसा होना- आश्चर्य की बात नहीं । मैंने दोनों से कहा, "बस भी करो, दूसरों की चर्चा से क्या लाभ।" मेरे प्रति उसकी नाराजगी को उसने मुँह मोड़कर स्पष्ट रूप से जता दिया था ।

उससे मितु दी' के विषय में सुनने से मन भारी हो गया। दीदी और मितु दी' की कभी पटती न थी । मैं दीदी के साथ अधिक समय न बिताकर मितु दी' के साथ रहता, इसलिए दीदी अभिमान करती थी । शायद इस वजह से वह मितु दी' से जलती थी और मौका मिलते ही उनके बारे में कुछ उलटीसीधी बोल देती थी । मितु दी' और मेरे बीच की करीबी को घटाने की कोशिश में वह बार-बार कहती, "मितु सिर्फ क्या तुम्हारे साथ ही घुमती है ? उसके तो पंचपांडव हैं.....।" ताजुब की बात तो यह है कि दीदी की बातों का असर मुझ पर उलटा ही होता और मैं उसे तरस भरी दृष्टि से देखता था। इस कारण दीदी और मेरे बीच की दूरी अत्यंत करुण और वेदनापूर्ण हो जाती थी । दीदी ने मितु दी' के बारे में गौरी को शायद और भी कुछ जानकारी दी थी। नहीं तो इस सात साल में मुझ पर कभी शक न करने वाली गौरी का संशय ज्वालामुखी का रूप क्यों लेता ? रोज की तरह सोते समय गौरी की तन पर अपना हाथ रखा । मेरे हाथ झिड़कते हुए वह दूर हट गई। मैंने पूछा, "क्या हुआ ?" उसने कहा, "जिसके शरीर पर हाथ रखने से सुख मिलेगा, उसीके पास जओ ।" गौरी की बात सुनकर आश्चर्य हुआ। इसी बात ने प्रमाण कर दिया था कि उसके मन में मेरे लिए संदेह था। मैंने उसके करीब जाकर कहा, "इस सात साल में अगर तुम्हारे पास ही मुझे सुख मिलता रहा, फिर दूसरे के पास क्यों जाऊँ ?" साँप की तरह फुफकारते हुए बोली, "किसे पता कहीं जाते हो या नहीं भी ? अपने पति को छोड़कर पराए मर्द पर जिसकी नजर है, दूसरों के संसार न उजाड़े उसे चैन नहीं मिलेगी ।" गौरी ने मितु दी' पर निशाना साधा था, इसमें संदेह न था । मैंने कहा, "दीदी चुगलखोर है। उसकी बातों में आकर बेकार मुझ पर अभिमान कर रही हो।" आग उगलते हुए उसने जवाब दिया, "तुम्हारी सगी बहन चुगलखोर है, तुम्हारी पत्नी असुंदर है, पर वह डायन है- सर्वगुणसंपन्ना और रसवती ।"

इसके बाद मुझे कुछ कहने का साहस नहीं हुआ और मैं सो गया। अविश्वास एक बार मन में घर कर जाता है तो उससे मन को छुटकारा दिलाना असंभव हो जाता है। बाँस में जब घुन लग जाता है तो अंदर ही अंदर वह कमजोर हो जाता, परंतु ऊपर दिखाई नहीं देता, ठीक उसी प्रकार गौरी के मन की बात पढ़ने का कोई उपाय न होते हुए भी दीदी की ही बातों में आकर उसके अंदर आग सुलग रही थी, मैंने अनुमान किया । पर इससे उसे बचाने के लिए मेरे पास कोई उपाय न था।

अब मैं मितु दी' के विषय में जानने की इच्छा को दमन नहीं कर सका और जानकारी इकट्ठा करने में जुट गया। एक दिन गाँव से होकर आया। ननिहाल भी जाता, पर गाँव में ही सारी जानकारी मिल जाने के करण नहीं गया। सब कुछ सुनने के बाद मैंने अनुभव हुआ कि मितु दी' की कहानी सरल नहीं बल्कि बहुत उलझी हुई है। मन को बड़ी ठेंस पहुँची। किशोरावस्था एवं आद्य यौवन की सबसे अंतरंग साथी थी मितु दी'। उनके बारे में हर समय अच्छा ही सोचा, उनकी उन्नति के लिए मन्नत माँगी। आज वह अपने असफल जीवन की ज्वाला लिए इधर-उधर भटकती रहे, मेरे लिए इससे बढ़कर दुख की बात और क्या हो सकती है? अनेक लोगों से चर्चा करने के बावजूद पता न चला कि वह कहाँ थीं परंतु गाँव से लौटते समय मामा के गाँव के मदन से बस में मुलाकात हो गई। मदन भी मितु दी' का सहपाठी था और उन्हें पाने के कई प्रयास के बावजूद असफल रहा, मुझे पता था। और इसके लिए वह मुझे ही जिम्मेदार ठहराता था।

बस में मुझे देखते ही बोल उठा, "अरे.... शुभ तो.... बहुत दिनों के बाद...।" मैंने उसे गले लगाते हुए कहा, "यह तो बहुत अच्छा हुआ जो तुमसे इस तरह अचानक मुलाकात हो गई। नौकरी जीवन में नौकरी ही सबसे पहला अबलंबन है-ऐसा माना जाता है, उसके बाद पत्नी, संतान और फिर रिश्तेदार। मैं तो तहसिलदार होकर पूरे ओड़िशा का चक्कर काट रहा हूँ। सात साल में ग्यारह बार तबादला, किसी की खोज खबर तक नहीं रख सका। अब बारिपदा आकर थोड़ा समय मिला है।" जैसे उसने मेरे मन की बात ताड़ ली, कहा- "मितु के बारे में सुना होगा। वह तो इसी शहर में है, तू भला आज तक उससे मुलाकात न की होगी....?" मदन की बातों को सुनकर चौंका जरूर पर आश्वस्त हुआ कि मितु दी' इसी बारिपदा में हैं। बरिपदा तो इतना बड़ा शहर तो है नहीं कि बहुत दिनों तक कोई किसीसे मिल न पाए। मैंने मदन से कहा, "तुम्हरी उनसे मुलाकात होती है ?" उसने जवाब दिया, "धत्! मैं क्यों जाऊँ मिलने उससे ? पहले जैसे मितु दी' और नहीं रही।" मैंने कहा, "कैसे ?" उसने बात आगे बढ़ाते हुए कहा, "मितु की शादी ब्रह्मपुर में हुई थी पर सप्तमंगला से पहले ही पति से अलग हो गई। उसके बाद वह संन्यासीनी होकर चिलिका के किनारे किसी आश्रम में चली गई थी। अब सुना है कि वह बारिपदा में है।"

मैं थोड़ा आश्वस्त हुआ कि वह बरिपदा में है। कोई उसे कितना ही गलत क्यों न कहे, मैं उन्हें गलत नहीं मानता। बारिपदा लौटकर मितु दी' की खोज में जुट गया। कई लोगों ने कई तरह की बातें कहीं थीं। एक दोस्त ने यहाँ तक बोल दिया था कि कॉलेज छात्रों को कृष्ण बनाकर मितु दी' राधा की भूमिका निभा रही हैं। पर इतना भला-बुरा मैं उनके बारे में सुन चुका था कि इस बात से मैं आश्चर्य नहीं हुआ। मेरा मन उदास हो गया उसके असफल जीवन की दर्दभरी कहानी सुनकर। एक अनमोल चीज को खो देने एवं उसके अभाव से मेरी अंतरात्मा दहकने लगी थी। मैंने अपने अंदर ऐसी रिक्तता का अनुभव कभी न किया था। आज ही समझ पाया कि अनजाने में ही मेरे दिल में उन्होंने कितनी बड़ी जगह बना ली थी।

बाबूपड़ा दो-चार बार गया, पर उनसे मुलाकात नहीं हुई। वह कहाँ रहती थी, निर्दिष्ट पता तो मैं नहीं जानता था। इस बीच कुछ दिन गुजर गए। सब कुछ पता होने जैसे गौरी ने कहा, "जितना ढूँढोगे-ढूँढो, कोई बात नहीं, पर उस वेश्या से जब भी मुलाकात हो, बोलना कि उसके जैसे पराए मर्द मैं नहीं ढूँढती। वह इस

तरह ही तड़पेगी। उसकी न कभी प्यास बूझेगी न कभी पेट भरेगा।" मन ही मन आहत हुआ । परंतु मितु दी' जैसी औरत का ऐसा चारित्रिक स्खलन नहीं हो सकता, पत्थर की लकीर की तरह यह बात मेरे मन में बैठ गई थी ।

मितु दी' से कैसे मुलाकात होगी- मन ही मन यह बात मुझे कचोट रही थी । सिनेमा, पार्क, मंदिर या बाजार कहीं भी जाऊँ मेरी आँखें उन्हें ही ढूँढती थीं। मुलाकात होती तो हाल-चाल पूछता, देखता बूढ़ाबलंग का पानी कहाँ पहुँचा है । उस दिन ऑफिस में बैठकर फाइलें देख रहा था । पाँच बज चुका था, इसलिए ऑफिस खाली हो चुका था। हेडक्लर्क अंदर बैठे झपकियाँ ले रहे थे क्योंकि मैं जब तक न जाता तब तक वह नहीं जा सकते । खिड़की से उन्हें सोते देख घर जाने के लिए कह दिया। जैसे मेरी अनुमति के इंतेजार में थे, तुरंत साइकिल चढ़कर अदृश्य हो गए । नटवर मेरा भरोसेमंद पिउन है । वह तैनात था मेरे और ऑफिस के लिए। उसे एक कप चाय के लिए भेजकर फाइलों पर मैंने नजर दौड़ाई ।

किसीके आने की आहट सुन फाइलों से नजर न हटाए नटवर चाय ले आया सोचकर हाथ बढ़ाते हुए कहा, "दो....."। आगंतुक ने कहा, "एक काबिल अफसर के रूप में आप परिचित हैं, लेकिन इतनी तन्मयता से काम चलेगा भला ?" मितु दी' की आवाज सुनकर मैं चौंका । मेरे और उनके बीच रहे सात साल के फासले का परदा आँखों से हट गया। मैं उन्हें देखते ही कुछ पल के लिए स्तब्ध हो गया । अवाक् हो गया, जुबान से एक शब्द भी नहीं लिकला। पर उन्होंने पहले के जैसे ही कहा, "बुद्धु कहीं के....एकटक ऐसे देख रहे हो, जैसे मैं डायन हूँ। भूत-वूत तो नहीं देखे ।" सहज होते हुए मैंने कहा, "मितु दी'.... आप ।"

उन्होंने कहा, "तुमने तो मेरी खोज खबर नहीं ली, पर क्या मैं हाथ में हाथ लिए बैठ पाती । इस शहर में आने के बाद यह उम्मीद थी कि तुम ढूँढते हुए मेरे पास पहुँचोगे । पर इंसान की हर ख्वाहिश तो पूरी नहीं होती ।" इस सवाल के बहाने मन की बात को गला लचकाते हुए नायाब शैली से कहा कि मेरे अंदर कैद हुई प्रगल्भता बाँध तोड़ बाहर कूद पड़ी । मैंने कहा, "आपको ढूँढते-ढूँढते चप्पल घीस गई है, साइकिल का चेन ढीला हो चुका है..... आप इतने दुर्लभ और दुष्प्राप्य हो जाएँगी किसे पता था ?" उन्होंने भौहें तानकर कहा, "मेरे बारे में सब कुछ जानते हुए भी यह बोल रहे हो ?" मैंने कहा, "अपने बारे में आप ही बताएँगी, दूसरों की अनधिकार चर्चा को मैंने महत्व नहीं दिया ।" उनका चेहेरा खिल उठा, बोलीं, "मेरी नजर में मैं खुद बदल गई, पर देख रही हूँ तुम वैसे का वैसा हो ।"

नटवर की लाई हुई चाय को बाँटकर दोनों ने पिया । पर उन्होंने कहा, "तुम्हारी आधी चाय पीकर मैं अन्याय तो नहीं कर रही हूँ।" पर मेरे कुछ कहने से पहले ही वे चाय खत्म चुकी थीं। फाइलें रखते हुए मैंने कहा, "यहाँ बैठकर बातें करेंगे या आपके घर चलें।" उन्होंने कहा, "अंधेरा ज्यादा हुआ नहीं। क्या तुम मेरे घर जाओगे ? लोग तुम्हें कुछ बोलेंगे नहीं तो?" कुछ पल के लिए मैं उन्हें एकटक देखता ही रहा।"

मितु दी' पहले से ऐसे ही हैं। जो बात मन में आती मुँह पर ही बोल देती । मन की बात मन में रखकर उसकी पीड़ा से जलने वालों में से वे नहीं हैं। फिर एक बार उन्हें देखा । इस सात साल ने उन पर ज्यादा

असर नहीं डाला। सिर्फ थोड़ी मोटी हो गई थीं । मन पहले जैसे लचीला और फूर्तिला । इस प्रकार की प्रसन्नमयी महिला भी इतने अनर्थ का मूल कारण हो सकती है, मेरे विश्वास से परे था। फिर कुछ तो जानने जैसे मैं पूछ बैठा, “और क्या समाचार, आप कैसी हैं, घर के बाकि सब कैसे हैं...?” मेरे कहने का उद्देश्य वह समझ गईं । बोलीं, “तुम इतने दिन नौकरी करने के बावजूद बच्चे जैसे ही हो, नहीं तो इस सवाल को सीधे भी पूछ सकते थे। ? फिर भी सुन लो, मैं तो अकेली ही हूँ। और किसीके बारे में पूछ रहे हो क्या ?" मैंने उनके चेहरे की ओर देखा, माँग में सिंदूर नहीं था। कहा, "झूठ मत बलो। बहुत कुछ सुना था आपके बारे में, पर विश्वास नहीं हुआ।" उन्होंने कहा, "मुझे देख ऐसा लग रहा है ?" मैंने कहा, "नहीं, पर यहाँ और बात नहीं करेंगे, आपके घर चलें।।" मितु दी’ के साथ मैंने बाबूपड़ा की ओर कदम बढ़ाया।

मितु दी’ बैठीं, मुझे बिठाया, फिर अंदर गईं । फिर आकर बोलीं, “कुछ खाओगे नहीं ?” मैंने कहा, "मितु दी’, बहुत दिन हो गए तुम्हारे हाथों का बनाया कुछ नहीं खाया, अगर न भी बोली होतीं, तो माँगकर ही मैं खा लेता।”

अचानक मितु दी’ भावुक हो गईं। मैंने देखा कि उनकी पलकें भीगी हैं । मेरी नजर बचाकर उन्होंने आँखें पोंछीं, उनका गला भर आया था, बोलीं, “गुजारे हुए दिन याद हैं तुम्हें, मैं अपने आप में ही गुम हो गई, शुभ !” उसके बाद सुनाई अपनी आपबीती। सब सुनने के बाद मैंने कहा, “आप ऐसे क्यों हैं?” “क्या झूठ बोलती”- उन्होंने जवाब दिया । सुहाग रात में पति ने मेरे पास बैठते हुए पूछा- “क्या एक बात तुम सच बताओगे ?” मैने कहा, “झूठ तो मैंने कभी नहीं कहा, फिर भी पूछो।” उन्होंने पूछा, “तुमने पहले किसीसे प्यार किया था ।” कुछ पल मैं चुप रही । सब कुछ जान जाने जैसे वे बोले, “चुप क्यों हो... बोलो।” जवाब दिया, “आपके जीवन में आने वाली क्या मैं पहली औरत हूँ ?” उन्होंने कहा, “मुझे शक कर रही हो?” मैंने कहा, “ना, वैसे ही पूछ बैठी, जैसे आपने मुझे पूछा ।” थोड़ी ऊँची आवाज से उन्होंने कहा, "तुम्हारी और मेरी बात एक-सी नहीं है। तुम्हें बताना होगा कि मुझसे शादी रचाने से पहले तुम्हारा किसीसे प्रेम संबंध था या नहीं।" उनकी स्वार्थी प्रवृत्ति को मैं बरदास्त न कर पाई और बोल उठी, “तुम्हारा किसी औरत के पास आना अगर यह पहला मौका नहीं है, तो तुमसे पहले मेरे जीवन में भी कोई आया होगा । बीती बातों को भूलकर आगे की सोचो, वर्तमान को भविष्य के लिए सँवारो।” उसके बाद विस्तर से उठकर वे चले गए और लौटे नहीं। मैं और किसके सहारे उनके घर पर रहती? आ गई। ब्रह्मपुर आकर भंजनगर में कुछ दिन नौकरी की। पर वहाँ भी नहीं रह पाई । शिक्षा विभाग के अधिकारी ने कहा, उनके साथ रात बिताऊँ । उनकी बातों में असहमत होकर मैं लौट आई। फिर रेडिओ स्टेशन में कैजुएल रोल का काम किया। वहाँ भी वही बात। रात बिताने का नौता या आदेश- जो समझो। फिर वहीं से बारिपदा । बाबूपड़ा में किराए का मकान है। पिता जी की जायदाद से जो कुछ मिलता है, चल जाता है- किसी तरह की कमी नहीं होती है।

मैंने दीर्घ साँस छोड़ते हुए कहा, “मितु दी’, अपने सुंदर जीवन को इस प्रकार निरर्थक न बना दें ।” उन्होंने कहा, “शुभ, जीवन का एक ही अर्थ होता है। उसी अर्थ का और एक अर्थ क्यों निकालोगे ? वह मुझसे नहीं होगा ।”

मैं चुप हो गया। उन्हें कुछ और पूछने के लिए भाषा न थी । मितु दी’ से मैं यह पूछना चाहता था, ‘किससे आप इतना प्यार करती हैं।’ पर मन की बात मन में ही रह गई। उन्होंने मेरे बारे में पूछा और गौरी की बात पूछकर मेरे उस वादे को याद दिलाया और कहा, “पता नहीं, तुम कैसे मुझे भूल गए ? पर तुमसे मेरी बहुत उम्मीदें थीं।” इतना कहने के बाद शायद उन्हें लगा कि मुझे ये बात लग गई। फिर कहा, “बहुत दिनों से जमे हुए अभिमान के कारण इतनी बात कह डाली। बुरा मत मानना । अब बताओ, “गौरी कैसी है, बच्चों का क्या हाल है ?” मैंने सिर्फ इतना कहा, “सब ठीक-ठाक है ।”

नाश्ता देते हुए मितु दी ने कहा, “आज नाश्ता कर लो, किसी दिन खाना बनाकर खिलाऊँगी ।” “सिर्फ किसी एक दिन ही खिलाएँगी ?” उसे खाते हुए मैंने कहा । मुसकराते हुए बोलीं, “ज्यादा दिन यहाँ खाओगे तो फिर गौरी क्या करेगी, कौन खाएगा उसके हाथों का खाना ?”

मितु दी’ ने मुँह पोंछने के लिए तौलिआ दिया, किशोरावस्था की याद हो आई और मैंने उनके आँचल में ही मुँह पोंछते हुए कहा, “माफ करना दी’ ! मैं पंद्रह साल पीछे चला गया।” फिर एक बार वे भावुक हो गईं।

“लौटने से पहले उन्होंने कहा, “संदेह मोचन के लिए कुछ पूछोगे नहीं?” जवाब दिया, “नहीं, सुहाग रात में अपने पति के सवाल का जवाब आपने नहीं दिया था, कभी अगर सुविधा हो तो बताना, बस और कुछ नहीं।”

वे मुझे अपने बेडरूम ले गईं और कहा, “इस कमरे में थोड़ा नहीं बैठोगे?"

कमरे में जाकर मैं सचमुच ही मुग्ध हो गया। एक बड़ा पलंग सुंदर सजाया गया था। अगरबत्ती की हलकी खुशबू पूरे कमरे में फैली हुई थी। एक छोटे टेबुल पर गुलदस्ता । दीवार पर रधा-कृष्ण का एक फोटो । मेरी ओर देखते हुए उन्होंने कहा, “ये है मेरा कमरा।" मैंने कहा, माकूल इंतजाम किया है अपने लिए ।” फिर एक कोने में चटाई के साथ-साथ एक तकिया देखकर आश्चर्य से पूछा, “यहाँ कौन सोता है दी’, आपकी नौकरानी ?”

मुसकराते हुए उन्होंने जवाब दिया, "मन सोता है पलंग पर और शरीर चटाई पर, नौकरानी तो भई है नहीं।"

मैं आश्चर्य से अवाक् हो गया। पर उन्होंने मेरे मन को हलका करते हुए कहा, “कभी मेरा भी यह अरमान था कि अपने मानस-पुरुष के साथ मखमली चादर वाले इस पलंग पर सोऊँ, पर एकाएक वह टूटकर पूरा बिखर गया, ऐसा नहीं है शुभ ! वरन यह कहा जा सकता है कि वह अरमान अभी भी जिंदा है ।"

मैंने अभीभूत होकर कहा, “रात को आप पलंग पर न सोकर नीचे चटाई पर सोती हैं मितु दी’...?” उन्होंने कहा, “हाँ, अगर तन पर काबू न किया जाए तो मन फिर न उड़ने लगेगा ? मैं क्या मीराबाई जैसे हो पाऊँगी? फिर भी उन्हें ही याद करती हूँ.... उसी रसिकपुरुष को.... ।”

तकिए के पास एक कॉपी देखकर मैं चौंका... फिर कहा, “यह ?” वह चेहरे पर प्रेम की छाप छोड़े मुसकराती हुई बोली, “तुम्हारी दी हुई कविता कॉपी, तुम्हें याद है? सबको मैंने छोड़ दिया, पर यह कॉपी मेरे साथ अब तक है, इसे छोड़ ही नहीं पाई।”

लौटने के लिए कमरे के बाहर मैंने कदम रखा और कहा, “आपका यह व्रत मैं तोड़ना नहीं चाहता मितु दी। वरन आप ऐसी ही रहें, यहीं आपका स्वर्ग है ।” विदा होकर आते समय उन्होंने कहा, “पर तुम्हारे सवाल का जवाब आज मैं नहीं दे पाई..शुभ...बुरा मत मानना ।”

मैंने फिर एक बार पलंग और दीवार पर टंगे राधा-कृष्ण के फोटो की ओर देखा और उस दिन के लिए मितु दी’ से विदा ली ।

****